National Research Journal of Human Resource Management
Volume No: 10, Issue No: 2, Year: 2023 (July-December)
PP: 30-33
ISSN No: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

स्वतंत्रता आंदोलन में संस्कृत साहित्य की भूमिका

कमल कुमार राम

(इतिहास)

स्वतंत्रता आंदोलन में संस्कृत साहित्य ईकाई के रूप में आयैतिहासिक युग से ही मिथिला का एक विशिष्ट परिचय रहा है और स्वतंत्रता आंदोलन में संस्कृत के अध्ययन के क्षेत्र में, चिंतन और दर्शन में अपनी महान् सर्वानात्मक उपलब्धियों से इसने भारत में संस्कृत साहित्य के निर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आर्यों की विदेह शाखा द्वारा मिथिला भूमि में विकासोन्मुख संस्कृति का शिलान्यास किया गया। जिसमें शीघ्र ही सम्पूर्ण मिथिला में संस्कृत साहित्य का अपनी एक निश्चित पहचान बना लिया गया था। महान कवि एवं जनकों के नेतृत्व में यह संस्कृत साहित्य उपनिषदों की रचना की भूमि बनी, जो संस्कृत जीवन में क्रांति के रूप में संस्कृत साहित्य आत्मा एवं परमात्मा के रूप में स्वतंत्रता आंदोलन में कवि के द्वारा संस्कृति भाषा एवं साहित्य का तलाश प्रारंभ हुआ।[1] क्रांति के बीज तत्व के रूप में ब्रह्म विद्या पल्लवित तथा पुष्पित हुई जिसमें आर्य संस्कृति के बौद्धिक क्षितिज को विस्तृत किया गया था। यजुर्वेद की शुक्ल शाखा का प्रणयन किया और संस्कृत स्मृति की रचना कर आध्यात्मिक एवं लौकिक विधि को ऐसा शास्त्रीय रूप प्रदान किया जो कालान्तर में ज्ञान की एक विशिष्ट शाखा के रूप में विकसित हुआ। संस्कृति स्मृति की इस याज्ञवल्क्य शाखा को पूर्व मध्यकाल में कवि लक्ष्मीधर, श्रीकर, हलायुध, भवदेव, अनिरुद्ध चण्डेश्वर आदि अनेक विद्वानों ने संवर्द्धित परिवर्द्धित किया। प्राचीन काल में मिथिला में गौतम ने जिस न्याय दर्शन का परिष्कार किया, उसे मध्य युग में कवि गंगेश उपाध्याय ने एक नवीन पद्धति प्रदान की। स्वतंत्रता आंदोलन के न्याय और मीमांसा के क्षेत्र में कवि प्रभाकर, पक्षधर, उदयन, वाचस्पति मुरारी शंकर आदि विद्वानों ने अपने योगदानों से सम्पूर्ण उत्तर भारत में मिथिला को एक संस्कृत प्रमुख शिक्षा केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित किया। विभिन्न ऐतिहासिक युगों में संस्कृति साहित्य की विविध विधाओं में अपनी श्रेष्ठ कृतियों में मिथिलावासियों ने अपनी शानदार बौद्धिक सृजनशीलता के साथ स्वतंत्रता आंदोलन में भागीदारी का परिचय दिया था। जिसमें कवि भानुदत्त मिश्र, पृथ्वीधर, जयदेव, गोविन्द, कृष्णदत्त आदि की संस्कृत भाषा के माध्यम से उत्कृष्ट साहित्य की रचनाओं से मिथिलावासियों की इस आंदोलन से बौद्धिक प्रतिभा का प्रदर्शन किया गया। ज्योतिरीश्वर ने वर्णरत्नाकर भाषा की रचनाओं की जो संस्कृत भाषा के साथ-साथ मैथिली साहित्य को आधुनिक उत्तर भारतीय भाषाओं का भी मार्गदर्शन मिला। विद्यापति ने मैथिली साहित्य को जिस ऊँचाई पर पहुँचा दिया, वह देव सत्ता पर लोक सत्ता की विजय का द्योतक है। यही कारण है कि मिथिला की सीमा से बाहर निकल कवि बंगाल आसाम और उड़ीसा में भी मैथिली का प्रसार हुआ।[2]

अतः मिथिला सुधारवादियों का उद्देश्य आधुनिकीकरण था न कि पश्चिमीकरण। पश्चिम की संस्कृति का अंधानुकरण सुधारवादी आंदोलन का हिस्सा नहीं रहा। मिथिला की भूमि न केवल संस्कृति, ज्ञान,

ISSN No: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

चिन्तन और सृजन का स्रोत रही है, बल्कि यह स्वतंत्रता आंदोलन के उदय और विकास के लिए भी अत्यन्त ही उर्वरा साबित हुआ। जो मिथिला में संस्कृति ऐतिहासिक युग का प्रारंभ ही महान वज्जी संघ के एक प्रमुख घटक के रूप में हुआ। यद्यपि इसका कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं होता कि मिथिला में कब और किस प्रकार विदेहों द्वारा स्थापित राजतंत्र गणतंत्र में रूपान्तरित हो गया, यह विवाद का विषय है कि मिथिला की मुख्य भूमि में राजतंत्र अथवा गणतंत्र था। लेकिन इस प्रक्रिया के समांतर एक और प्रक्रिया चल रही थी। भारतीय समाज पर औपनिवेशिक संस्कृति और विचारधारा का हमला दिन-ब-दिन तेज होता जा रहा था। इसलिए पारंपरिक स्वतंत्रता आंदोलन को पुनर्जीवित करने की कोशिशें भी 19वीं सदी में शुरू हुईं। जो पारंपरिक संस्कृति की सामर्थ्य और क्षमताओं की तरफ लोगों का ध्यान गया। चूँकि जिन स्वतंत्रता आंदोलन सिद्धांतों के आधार पर औपनिवेशिक काल के मुकाबले कम प्रतिगामी थे। इसलिए औपनिवेशिक वर्चस्व के खिलाफ संघर्ष शुरू में अपनी संस्कृति की रक्षा के रूप में अभिव्यक्त हुआ। स्वतंत्रता आंदोलन में संस्कृति से जुड़ी बनते लोगों की भावनाओं को जल्दी प्रभावित करती है और संस्कृति पर हमले को ज्यादा शिद्दत के साथ महसूस किया जाता है, इसलिए जैसे-जैसे औपनिवेशिक साम्राज्य का विस्तार होता गया, सांस्कृतिक हमले से बचाव के लिए भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में संस्कृत साहित्य को समाज के लोगों में ढाल बनाते गए।[3]

स्वतंत्रता आंदोलन के समय औपनिवेशिक संस्कृति के विरूद्ध आंदोलन चौतरफा था। इसलिए समूचे सांस्कृतिक अस्तित्व को लेकर भारतीयों की चिंता स्वाभाविक ही थी - भाषा, कला, दर्शन सब इस औपनिवेशिक हमले के निशाने पर थे। इसलिए जो जवाबी कार्रवाई की गई, उसकी दो विशेषता थी, एक तो वैकल्पिक सांस्कृतिक-वैचारिक पद्धति का विकास और दूसरी पारंपरिक संस्थाओं को पुनर्जीवित करने की कोशिश। इसी के तहत भारतीय भाषाओं के विकास कोशिशें की गईं। संस्कृत शिक्षा की वैकल्पिक प्रणाली ढूंढी गई, भारतीय कलाओं और साहित्य के पुनरूत्थान के प्राय हुआ। भारतीय पहनावे और भारतीय भोजन पर जोर दिया गया। धर्म की रक्षा का आह्वान किया गया। भारत की पुरानी चिकित्सा-पद्धति आयुर्वेद को फिर से स्थापित करने की कोशिशें हुईं और पुनः पारम्परिक तकनीक और दस्तकारी को फिर वापस लाने और पारंपरिक ज्ञान की पुनर्रचना के प्रयास हुए। भारतीय पहनावे और भारतीय भोजन पर जोर दिया गया, धर्म की रक्षा का आह्वान किया गया। भारतीय बचाव को इस रणनीति की झलक स्वतंत्रता आंदोलन को देखने को मिला हमें तत्त्वबोधिनी सभा की स्थापना और उसकी गतिविधियों को लेकर राममोहन राय और ईसाई मिशनरियों के बीच हुई बहस में मिलती है। मद्रास के 70 हजार निवासियों ने संस्कृति शिक्षा प्रणाली को लेकर जो ज्ञापन दिया था और लेक्स लोकी ऐक्ट (स्थानीय रीति अधिनियम) के खिलाफ जो व्यापक असंतोष उत्पन्न हुआ था, उसके पीछे संस्कृति की रक्षा की ही चिंता थी। बाद के आंदोलनों में, जिन्हें आमतौर पर परंपरावादी और पुनरूत्थानवादी कहा जाता है, यह चिंता और भी स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हुआ। पूरी तरह देशीयतावादी प्रवृत्ति के ये संस्कृति आंदोलन औपनिवेशिक संस्कृति के आंदोलन से अपनी संस्कृति की रक्षा के लिए खुलकर सामने आए। इसलिए इस विशिष्ट ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में संस्कृत आंदोलन प्रतिगामी नहीं थे क्योंकि इनका मुद्दा उस संस्कृति की रक्षा करना था, जिसमें औपनिवेशिक संस्कृति ने अगर नष्ट नहीं

ISSN No: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

किया था, तो भी बहुत दूर तक नुकसान तो पहुँचाया ही था। फिर संस्कृति आंदोलन इसलिए भी महत्वपूर्ण थे कि राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना के विकास में इससे बहुत मदद मिली। यह संस्कृत भाषा की जरूरत है कि कुछ देशीयतावादी प्रवृत्तियाँ इस ऐतिहासिक आवश्यकता की सीमाएँ नहीं पार कर सकती और अपनी जगह बनी रही, और आगे चलकर इनका दृष्टिकोण संप्रदायवादी और सुधार-विरोधी हो यगा। संभवतः यह राजनीति और सांस्कृतिक संघर्षों के बीच एकीकरण और तालमेल न होने का नतीजा था, जिससे राजनीतिक चेतना का विकास तो हुआ। लेकिन सांस्कृतिक पिछड़ापन बना रहा।[4]

बहरहाल, इन सामाजिक धार्मिक आंदोलन के जरिए जो सांस्कृतिक-वैचारिक संघर्ष चला, जिसमें सांस्कृतिक राष्ट्रीय चेतना को जन्म देने और उसके विकास में बहुत महत्वपूर्ण योगदान किया, क्योंकि शुरुआती दौर में इसने बौद्धिक और सांस्कृतिक जागरूकता पैदा की। उससे सामाजिक लोगों को भविष्य के प्रति नई दृष्टि मिली। दूसरे, यह संघर्ष औपनिवेशिक संस्कृति और विचारधारा के संस्कृति आंदोलन के प्रतिरोध के रूप में छेड़ा गया था। दो मोर्चों पर एक साथ चले इस संघर्ष ने आज की आधुनिक भारतीय संस्कृति की स्थिति को जन्म दिया- नए आदमी, नए परिवार और नया समाज। सांस्कृतिक भाषा के माध्यम से सामाजिक, आर्थिक आधारों को निरूपित किया जा सकता है। संस्कृति में वर्णित मिथिला उपनिवेशित समाज को धर्मसूत्रों के सामाजिक वर्गों में विभाजन से जो स्थिरता प्राप्त हुई थी। स्वतंत्रता आंदोलन के लिए जो सुदृढ़ सामाजिक आधार प्राप्त हुआ था। वह सांस्कृतिक साहित्य के क्षेत्र में लोहा की तरह क्रान्तिकारी परिवर्तन से व्यापक रूप से प्रभावित हुआ। एक विकसित कृषक समाज के उदय तथा उद्योग और व्यापार के बढ़ते कार्यकलाप ने न केवल परम्परागत सामाजिक आर्थिक वर्गों के नए स्वार्थ पैदा किये। संस्कृति उनके लिए नवीन आध्यात्मिक राजनीतिक मूल्यों और जरूरतों को भी जन्म दिए यह मूल संस्कृति का मूल सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति का सहज स्वाभाविक परिणाम था। स्वतंत्रता आंदोलन स्रोत के आधार पर हम गणतांत्रिक युग में मिथिला की भौतिक सांस्कृतिक के मुख्य तत्वों को चिन्हित कर सकते हैं और औपनिवेशिक अवधि में प्रमुख सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों को रेखांकित-विश्लेषित कर सकते हैं। कई आधुनिक विद्वानों ने पाली साहित्य के इतिहास पर सामग्री के उपयोग अपने ऐतिहासिक अध्ययन का आधार बनाया है। इनसे मिथिला के सामाजिक, आर्थिक, संस्कृति के अध्ययन में पर्याप्त सहायता मिलती है।[5]

अतः इस संस्कृति आधुनिक ऐतिहासिक अध्ययनों का उल्लेख प्रासंगिक होगा। जिसमें प्रारंभिक पाली साहित्य के आधार पर तत्कालीन भारत का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक चित्र प्रस्तुत किया गया है। विशेष रूप से क्षत्रिय एवं वैश्य कुलों के बदले प्रभाव पेशागत जातियों की समाज स्थिति एवं इनके पारस्परिक अन्तः संबंध और सामाजिक जीवन का अन्तर्द्वन्द्व इस संस्कृति अध्याय का प्रतिवाद विषय है। यह स्वतंत्रता आंदोलन में समाज के सांस्कृतिक जीवन को चिन्हित कर विवेचन किया गया था।

अतः उपनिवेश काल में तेजी से होती प्रतिक्रिया ग्रामीण एवं शहरी आबादी, आवासीय ढांचे आहार परिधान एवं प्रसाधन के तौर-तरीके सामाजिक नैतिकता और स्वतंत्रता युग में सामाजिक

ISSN No: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

विचारधाराओं आदि सांस्कृतिक के महत्वपूर्ण आयामों का अध्ययन किया गया है। और संस्कृति में ग्रामीण आर्थिक प्रणाली के विकास को रेखांकित किया गया है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत कृषि का विस्तार कृषि तकनीक प्रमुख पैदावार, कृषि संबंध कृषि से जुड़े एवं अन्य ग्रामीण व्यवसाय, कृषि अधिवेशन एवं ग्रामीण बाजार व्यवस्था और मूलभूत ग्रामीण आर्थिक, सांस्कृतिक संरचना पर विस्तार से विवेचन किया गया है।[6]

स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में मिथिला के इतिहास का संक्रमण काल था, जो संस्कृति में इस काल में विभिन्न नये तत्वों का समावेश हुआ, जिसे यहाँ के सामाजिक, धार्मिक एवं बौद्धिक जीवन में स्पष्टतः चिन्हित किया जा सकता है। परन्तु इस समय सांस्कृतिक-साहित्य के साथ राजनीतिक सत्ता का केन्द्र वैशाली था। अतः मिथिला की मुख्य भूमि नये धार्मिक दार्शनिक मतों और सामाजिक बदलावों से उतना अधिक प्रभावित नहीं हुआ जितना कि इसका पश्चिमी भाग अर्थात् वैशाली संस्कृति परिक्षेत्र माना जाता था। फिर भी यह सांस्कृतिक परिवर्तन का ही परिणाम था। मिथिला अपने उपनिवेशन काल से ही शिक्षा का प्रमुख केन्द्र रहा है और जनक याज्ञवल्क्य की परम्परा इस काल में भी बनी रही। युवाओं को दूरस्थ स्थानों पर भी पढ़ने के लिए भेजा जाता था। संस्कृति शिक्षा के लिए महाली नामक युवक को तक्षशिला जैसे विश्व प्रसिद्ध केन्द्र में शिक्षा ग्रहण करने गया था। संस्कृति शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत वैशाली लौटकर उसने पाँच सौ लिच्छवियों को शिक्षा दी। फिर ये पाँच सौ लिच्छवि शिक्षा प्राप्त कर पुनः देश के विभिन्न भागों में पढ़ाने के लिए गये। संस्कृति साहित्य का प्रचार सारे देश में था।[7] वैशाली भी उसमें से प्रमुख केन्द्र माना जाता था। स्वतंत्रता आंदोलन के समय से ही मिथिलावासी धर्म और संस्कृत दर्शन पर बहस करने में इतना अधिक दिलचस्पी लेते थे कि उन्होंने भगवान बुद्ध के लिए कुटागार शाला ही बनवा दी थी। बौद्ध सिद्धि विहारिक साधारणतया विनय, गाथाओं जातक कथाओं प्रार्थनाओं मूल तत्वों और बौद्ध दर्शन में प्रवीण होते थे। स्वतंत्रता आंदोलन के समय से नारी को भी संस्कृति शिक्षा के क्षेत्र में पीछे नहीं रहा। वे नृत्य गीत और संगीत की शिक्षा विशेष रूप से प्राप्त करती थी। यह गणिकाएँ इनमें विशेष रूचि लेती थी। चित्रकला में यहाँ की नारियाँ काफी त्रिपुण थी। जो बिना प्रशिक्षण के संभव नहीं था।[8]

संदर्भ-सूची :

1. योगेन्द्र मिश्र– हिस्ट्री ऑफ विदेह, पटना, 1981
2. डॉ० उपेन्द्र ठाकुर– बुद्धिज्म एंड जैनिज्म इन मिथिला, वाराणसी, 1954, पृ. – 13-14
3. एच.सी. राय चौधरी– पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एन्शिएन्ट इंडिया, 1984, पृ. – 118
4. श्याम नारायण सिंह– हिस्ट्री ऑफ तिरहुत कलकत्ता, 1992, पृ. 34
5. जी.पी. शर्मा– रिपब्लिक्स इन ऐन्शिएन्ट इंडिया, लंदन, 1968, पृ. 136
6. अमलानन्द घोष– द सिटी इन अर्ली हिस्टॉरिकल इंडिया, शिमला, 1976

ISSN No: 2394-059X
Peer Reviewed & Refereed Journal
National Research Journal

7. एस.पी. चौधरी– एग्रीकल्चर एन्शिएन्ट इंडिया, नई दिल्ली, 1964

8. जगदीशचन्द्र जैन– जैन आगस साहित्य में भारतीय समाज, वाराणसी, 1965